साहित्य और समाज विमर्श: शोध के नए आयाम

लेखक
प्रोफेसर श्रीप्रकाश मिश्रा
आर्ट्स एवम् कॉमर्स कालेज देहगाम,
गाँधीनगर, गुजरात
गुजरात विश्वविद्यालय

सारांश :— समूचा मानव व्यवहार ज्ञान, इच्छा और कर्म के त्रिवेणी संगम का फल है। मनुष्य को सर्वप्रथम किसी वस्तु पदार्थ या व्यक्ति का ज्ञान होता है। ज्ञान के बाद इच्छा का जन्म होता है, और यही इच्छा मनुष्य को कर्म में प्रवृत्त करती है। दूसरे शब्दों में किसी भी वस्तु का ज्ञान हमें क्रिया के लिये प्रेरित करता है। जब हम सुनते हैं कि हमारा कोई स्नेही मित्र कई दिनों के बाद लौटा है तो हम तुरन्त उसे मिलने दौड़ पड़ते हैं। आनंद की एक अजस्र धारा हमारे चेहरे से फूटने लगती है और हम खिल उठते हैं। उसी प्रकार हमारे किसी निकटवर्ती स्नेहीजन के बारे में कोई दुःखद समाचार मिलते हैं तो हम रोने-बिलखने लगते हैं। शत्रु को देखते हैं तो नाक-भौंह सिकोड़ते हैं, प्रेमीजन को देखते हैं तो बांहें खिल जाती हैं। तात्पर्य यह कि जगत की किसी वस्तु का ज्ञान होने पर हम अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं। यह प्रतिक्रिया आंगिक, मानसिक, शाब्दिक यों किसी भी प्रकार की हो सकती है। परन्तु यह प्रतिक्रिया जब शाब्दिक होती है और लेखन के रूप में मूर्त स्वरूप धारण करती है, तब वह साहित्य के अंतर्गत आती है।

बीज शब्द : मानव व्यवहार, साहित्य, वाङमय, साहित्यकार,

समूचा मानव व्यवहार ज्ञान, इच्छा और कर्म के त्रिवेणी संगम का फल है। मनुष्य को सर्वप्रथम किसी वस्तु पदार्थ या व्यक्ति का ज्ञान होता है। ज्ञान के बाद इच्छा का जन्म होता है, और यही इच्छा मनुष्य को कर्म में प्रवृत्त करती है। दूसरे शब्दों में किसी भी वस्तु का ज्ञान हमें क्रिया के लिये प्रेरित करता है। जब हम सुनते हैं कि हमारा कोई स्नेही मित्र कई दिनों के बाद लौटा है तो हम तुरन्त उसे मिलने दौड़ पड़ते हैं। आनंद की एक अजस्र धारा हमारे चेहरे से फूटने लगती है और हम खिल उठते हैं। उसी प्रकार हमारे किसी निकटवर्ती स्नेहीजन के बारे में कोई दुःखद समाचार मिलते हैं तो हम रोने-बिलखने लगते हैं। शत्रु को देखते हैं तो नाक-भौंह सिकोड़ते हैं, प्रेमीजन को देखते हैं तो बांहें खिल जाती हैं। तात्पर्य यह कि जगत की किसी वस्तु का ज्ञान होने पर हम अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं। यह प्रतिक्रिया आंगिक, मानसिक, शाब्दिक यों किसी भी प्रकार की हो सकती है। परन्तु यह प्रतिक्रिया जब शाब्दिक होती है और लेखन के रूप में मूर्त स्वरूप धारण करती है, तब वह साहित्य के अंतर्गत आती है।

साहित्य को संस्कृत में वाङमय भी कहा गया है। अर्थात् जो भी वाणीमय है, जो भी शब्दमय है वह साहित्य है । अरबी-फारसी में इसे 'अदब' कहते हैं । 'अदब' का अर्थ है शिष्टाचार । अर्थात् जिससे हम शिष्टाचार और मानव संस्कारों को ग्रहण करते हैं वह 'अदब' है । अंग्रेजी में इसे 'लिटरेचर' कहते हैं। 'लिटरेचर' का सम्बन्ध 'लेटर' से है। लेटर अर्थात् वर्ण या अक्षर । यह अक्षर हो तो सबकुछ है । और जो भी अक्षरमय है, शब्दमय है, वह लिटरेचर अर्थात् साहित्य है।

इस हिसाब से तो संसार के सभी विषय यहां तक कि बनियों के बही-खाते, दवाईयों के प्रॉस्पेक्ट, सूचीपत्र आदि सभी साहित्य के अन्तर्गत आ जाएँगे | कई बार सामान्य भाषा में कहा भी जाता है कि यदि आपको हमारी इस योजना में रूचि हो तो उससे संबंधित साहित्य हम आपको भेज देंगे। यहां 'साहित्य' शब्द का प्रयोग उसी व्यापक रूप में हुआ है ।

परंतु 'साहित्य' शब्द का एक अर्थ रूढ़ भी है। जब हम हिन्दी साहित्य गुजराती साहित्य, अंग्रेजी साहित्य आदि कहते है तब 'साहित्य' शब्द का प्रयोग उसके उसी रूढ-प्रचलित रूप में करते हैं। आंग्ल-विवेचक डिक्बेन्सीने इन दोनों के अंतर को समझाने के लिये साहित्य को दो वर्गों में विभाजित किया है: (१) लिटरेचर फ नालेज, (२) लिटरेचर ऑफ़ पावर | 'लिटरेचर ऑफ़ नालेज' हमारा शास्त्र है और 'लिटरेचर ऑफ पावर' हमारा काव्य अर्थात् साहित्य | प्रथम के अंतर्गत संसार के तमाम शास्त्र और विषय आ जाते हैं और दूसरे के रूढ़ अर्थ में प्रयुक्त साहित्य | यहाँ हम जिस 'साहित्य' शब्द की चर्चा करने जा रहे हैं, उसका सम्बन्ध इसी दूसरे वर्ग अर्थात् 'लिटरेचर ऑफ पावर' से है।

यहाँ एक बात की स्पष्टता और हम कर देना चाहेंगे कि हमारे यहां 'काव्य' और 'साहित्य' शब्द प्रायः समानार्थी माने गये हैं। 'काव्येषु रम्यं नाटकम्' में नाटक को भी काव्य कहा गया है। जब हम काव्यशास्त्र कहते हैं तो उसका आशय यही ग्रहण किया जाता है कि उसमें साहित्य के सभी प्रकारों और अंग-उपांगों को चर्चा होगी। परंतु इसी 'काव्य' शब्द को कई बार या संकुचित अर्थ में भी ग्रहण किया जाता है। उदाहरणार्थ जब इस 'प्रसाद का काव्य' या का काव्य' आदि शब्द प्रयोग करते हैं, तब उसका अभिप्राय प्रायः उनको पध्यबद्ध बचनाओं से होता है। उसी प्रकार जब हम काव्य की परिभाषा पर विचार करते हैं तो प्रायः हमारा अभिप्राय कविता की परिभाषा से होता है |

'"साहित्य; शब्द की व्युत्पति इस प्रकार समझाई गई है कि - 'सहित्यस्य भावः साहित्यम' अर्थात सहित होने का भाव साहित्य है |"1 इस 'सहित' शब्द को भी दो प्रकार से लिया गया है।

साहित्य की परिभाषा करते हुए कहा गया है-" 'हितेन सहितम्' अर्थात् जो हित साधन करता है, वह साहित्य है। साहित्य उस रचना को कहते हैं जो लोकमंगल का विधान करती है।"2 मुंशी प्रेमचन्द के अनुसार - "साहित्य जीवन की आलोचना है।"3 इस सूक्ति से यह स्पष्ट है कि साहित्य का जीवन से घनिष्ठ सम्बन्ध है।

साहित्य में जीवन की अभिव्यक्ति किसी न किसी रूप में अवश्य होती है, वह नितान्त जीवन निरपेक्ष नहीं हो सकता, इतना अवश्य है कि उसका कुछ अंश यथार्थ होता है, तो कुछ काल्पनिक होता है। भारतीय चिन्तक एवं कवि साहित्य के उपयोगितावादी दृष्टिकोण का समर्थन करते हैं। कविवर मैथिलीशरण गुप्त के अनुसार- "मानते हैं जो कला को बस कला के अर्थ ही स्वार्थिनी करते कला को व्यर्थ ही।"4

कला केवल सौन्दर्य का ही विधान नहीं करती अपितु वह सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम् से युक्त होकर लोकमंगल का विधान भी करती है । कला हमारी मार्गदर्शिका है, साहित्य हमारा प्रेरक है और संस्कृति हमारी पहचान हैं। इसी की अभिव्यक्ति निम्न पंक्तियों में हुई है - "किन्तु होना चाहिए क्या कुछ कहाँ? व्यक्त करती है इसी को तो कला ।"5

साहित्य और समाज एक-दूसरे के पूरक है । बिना साहित्य के किसी समाज की कल्पना भी नहीं की जा सकती । यहाँ तक की आदिवासी या जंगली कही जानेवाली जातियों का भी अपना एक साहित्य होता है । कुछ अंश तक साहित्य समाज को बनाता है तो कुछ अंश तक समाज भी साहित्य की गितिविधियों पर प्रभाव डालता है । दोनों में आदान-प्रदान और क्रिया-प्रतिक्रिया का भाव चलता रहता है । साहित्य समाज का मुख भी है और मष्तिस्क भी है । दोनों परस्पर एक-दूसरे पर आश्रित है । समाज है तो साहित्य है और साहित्य ही समाज को गौरवान्वित करता है । जिस समाज का देश का साहित्य जितना ऊँचा उतना वह

महान कहलाता है क्योंकि महान साहित्य ही संस्कृति के कमल को खिलाता है । प्राचीन भारत और उसकी संस्कृति का महत्व उसके महान साहित्य के कारण है | जिस समाज के पास व्यास और वाल्मीकि, कालिदास और भवभूति हों वह भला संसार का सिरमौर क्यों नहीं होगा ?

- **साहित्यकार की महत्ता :**

किसी देश, जाति या समाज की पहचान उसके साहित्य से होती है। साहित्य हमारी संस्कृति की जलती हुई मशाल है और वही हमारे राष्ट्रीय गौरव एवं गर्व की वस्तु है। भारत की वास्तविक पहचान वे कालजयी कवि और लेखक हैं जिनकी रचनाएँ हमारा सम्बल हैं। तुलसी, कबीर, प्रसाद, पन्त, निराला, रवीन्द्रनाथ टैगोर, प्रेमचन्द, शरतचन्द्र, दिनकर, सुब्रमण्यम भारती, विमलराय, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हजारी प्रसाद द्विवेदी, कालिदास, बाणभट्ट जैसे साहित्यकारों से ही भारत की आत्मा को पहचाना जाता है। इनकी कालजयी कृतियों ने विश्व - साहित्य में भारत का गौरव बढ़ाया है।

- **साहित्य की उपयोगिता :**

आज के वैज्ञानिक युग में हरेक कार्य को उपयोगिता की कसौटी पर कसा जाता है। साहित्य के विद्यार्थियों से अधिकतर इसके अध्ययन की सार्थकता के विषय में पूछा जाता है | कुछ उपयोगितावादी तो यहाँ तक आगे बढ़ जाते हैं कि इस विज्ञान और टेक्नोलोजी के युग में साहित्य की कोई जरूरत नहीं है | किन्तु विज्ञान और टेक्नोलोजी से सिर्फ भौतिक-समृद्धि आयेगी और मनुष्यता के बिना इस आध्यात्मिक समृद्धि के मनुष्यता का पतन तथा विनाश होता है ।

साहित्य व्यक्ति का संस्कार करता है । उसके भीतर छिपे देवता को जगाता है तथा पाशविकता का शमन करता है। तुलसीदासजी ने स्वीकार किया है कि कविता लोकमंगल का विधान करती है तथा वह गंगा के समान सबका हित करने वाली होती है-

"कीरति भनिति भूति भल सोई। सुरसरि सम सब कहँ हित होई।"6

- **साहित्य और समाज का सम्बन्ध :**

साहित्य और समाज का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है। समाज का पूरा प्रतिबिम्ब हमें तत्कालीन साहित्य में दिखाई पड़ता है। समाज में व्याप्त आशा-निराशा, सुख-दुःख, उत्साह हताशा, जैसे भाव साहित्य को प्रभावित करते हैं तथा इन्हीं से साहित्य के स्वरूप का निर्धारण होता है। समाज में यदि निराशा व्याप्त है तो साहित्य में भी निराशा झलकती है तथा समाज में यदि युद्ध का खतरा व्याप्त है तो साहित्यकार भी ओज भरी वाणी में दुश्मन पर टूट पड़ने का आह्वान करतारीवाणी में दुश्मन पर टूट पड़ने का आह्वान करता दिखाई देता है। इसीलिए कहा गया है कि साहित्य समाज का दर्पण है। दर्पण में वही प्रतिबिम्ब दिखाई पड़ता है जो उसके सामने रख दिया जाता है, ठीक उसी प्रकार साहित्य में तत्कालीन समाज ही प्रतिबिम्बित होता है।

प्रेमचन्द के गोदान में ग्रामीण किसान होरी की व्यथा-कथा को पढकर हमें यह अनुमान हो जाता है कि तत्कालीन जमींदारी प्रथा में किसानों का शोषण किस तरह होता था। साहित्य जनता की चित्तवृति का प्रतिबिम्ब है। जनता की अनेक आशाएँ चिन्तन-मनन, विचार-तर्क, सब कुछ साहित्य में देखे जा सकते हैं। साहित्य की आवश्यकता हर समाज में रही है। इस संदर्भ में कहा गया है: "अन्धकार है वहाँ जहाँ आदित्य नहीं है। मुर्दा है वह देश जहाँ साहित्य नहीं है।"7

सामाजिक परिवर्तन और साहित्य में किसी प्रवृत्ति का उदय तत्कालीन परिस्थितियों साहित्य में किसी प्रवृत्ति का उदय तत्कालीन परिस्थितियों के कारण होता है। परिस्थितियां जनता की चित्तवृत्ति को बदलती हैं और जनता की चित्तवृत्ति बदलने से साहित्य के स्वरूप में परिवर्तन होता है। वीरगाथा काल में वीरता की प्रवृत्ति प्रधान थी इसीलिए उस काल में पृथ्वीराजरासो, परमालरासो जैसे वीर रस प्रधान ग्रन्थ लिखे गए, जबकि भक्तिकाल में भक्ति भावना की प्रधानता के कारण सूर, तुलसी, कबीर जैसे कवियों ने भक्ति की मशाल प्रज्वलित की। रीतिकाल में समाज में विलास वृत्ति प्रधान हो गई थी जनता में प्रेम, सौन्दर्य एवं भाव-भंगिमा के प्रति अभिरुचि बढ़ गई थी, इसीलिए इस काल की कविता में श्रृंगार रस की प्रधानता दिखाई देती है । रीतिकाल में रचित 'बिहारी सतसई' श्रृंगार रस प्रधान रचना है।

- **साहित्य की शक्ति :**

साहित्य में व्यक्ति और समाज को प्रभावित करने की अपार शक्ति होती है। कहा जाता है कि विलासरत राजा जयसिंह अपने राजकाज को छोड़कर नवोढ़ा रानी के प्रेम में ऐसा डूबा था कि उसे अपना भी होशोहवास न था। किसी का साहस न था कि महाराजा को कर्तव्य बोध करावे। तब बिहारी ने एक दोहा लिखकर भेज दिया : "नहिं पराग नहिं मधुर मधु नहिं विकास इहि काल। अली कली ही सौं बंध्यौ आगे कौन हवाल।"8

हे भ्रमर ! तू इस कली में इतना अनुरक्त है-अभी इसमें न तो पराग की रंगत है, न मधर मकरन्द है और न ही यह अभी पूर्ण विकसित ही है, आगे जब यह पूर्ण विकसित पुष्प बनेगी तब तेरी क्या दशा होगी?

इस दोहे में छिपे अन्योक्तिपरक अर्थ को राजा ने भलीभांति समझ लिया और महल से बाहर आकर राजकाज में संलग्न हो गया। यह घटना इस तथ्य को प्रमाणित करती है कि साहित्य में असीमित शक्ति होती है।

'साहित्य' के द्वारा ही व्यक्ति और समाज का निर्माण किया जाता है। सत्साहित्य आचरण को गढ़ता है, मनोविकारों पर अंकुश लगाता है, सन्मार्ग की ओर प्रेरित करता है। साहित्य की शक्ति तोप से कहीं अधिक है। तोप का मुकाबला अखबार ही कर सकता है। कलम का सिपाही कभी हारता नही, काम कर सकता है। कलम का सिपाही कभी हारा नहीं, उसकी ताकत असीमित होती है। वह सीधे दिल पर प्रहार करता है। उसकी चोट बाहर घाव न पहुँचाकर अन्दर प्रभाव डालती है।

- **समाज को प्रभावित करने की क्षमता :**

साहित्य में जनता को प्रेरित करने की अपार क्षमता से सम्पन्न होता है। स्वतन्त्रता संग्राम के अवसर पर लिखी गई यह कविता जो एक 'पुष्प की अभिलाषा' शीर्षक से प्रकाशित हुई थी, अनेक लोगों के लिए प्रेरणा स्रोत बन गई थी :

"मुझे तोड़ लेना बनमाली उस पथ पर देना तुम फेंक, मातृभूमि पर शीश चढ़ाने जिस पथ जावें वीर अनेक ।"9

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि किसी भी समाज की वास्तविक पहचान उसके साहित्य से होती है। साहित्य ही समाज का प्रेरक, निर्धारक एवं भाग्य नियन्ता है। दूसरी ओर समाज की चित्तवृत्ति के अनुरूप ही साहित्य का निर्माण होता है। साहित्य में समाज की आशा, अपेक्षा, आकांक्षा , हताशा, उत्साह अवसाद, हर्ष, विषाद के भाव व्याप्त रहते हैं।

इस प्रकार यहाँ पर मैंने साहित्य और समाज का विभिन्न पहलुओं को देखते हुए साहित्य और समाज के घनिष्ठ संबंध को चरितार्थ किया है |

----------00--------

संदर्भ सूची

1. समीक्षायण-डॉ. पी.के. देसाई .पृ.7
2. वही
3. वही
4. वही पृ.18
5. वही
6. रामचरित मानस -तुलसीदास .पृ. 61
7. साहित्य का उद्देश्य-प्रेमचंद.पृ.15
8. बिहारी सतसई -बिहारी .पृ.50
9. पुष्प की अभिलाषा - माखनलाल चतुर्वेदी .पृ.11

----------00--------